द्वितीय विश्वयुद्ध : कारण

प्रथम महायुद्ध की भयानक त्रासदी के मात्र बीस वर्षों के पश्चात् ही विश्व को एक और अपेक्षाकृत भयानक एवं विनाशकारी युद्ध का सामना करना पड़ा। प्रथम महायुद्ध के भागीदार राष्ट्रों एवं नागरिकों के सारे दावे एवं विश्वास कि महायुद्ध (प्रथम युद्ध) से यूरोप को मुक्ति दिला देगा, खोखले साबित हो गये जब सितम्बर 1939 में जर्मनी द्वारा पोलैंड पर आक्रमण के पश्चात् समस्त विश्व, युद्ध की चपेट में आता चला गया। शांति संधियाँ जैसा कि "मार्शल फॉच" का कहना है, मात्र बीस वर्षीय विराम संधियाँ ही साबित हो कर रह गयी।

प्रथम महायुद्ध के बाद हुई शांति संधियों के बाद से ही यह स्पष्ट था कि शांति स्थायी नहीं होगी। उसके रचनाकार भी यह बात अच्छी तरह समझते थे लेकिन उनपर विजय का मद एवं साम्राज्यवाद का नशा छाया हुआ था। शांति संधियों विशेषतः जर्मनी के साथ हुई 'वार्साय की संधि' ने ही घटनाओं का ऐसा जाल बुना, जिसने कि द्वितीय विश्वयुद्ध को अपरिहार्य बना दिया।

28 जून 1919 को जर्मनी के साथ हुई वार्साय की संधि में मित्रदेशों ने जर्मनी को आर्थिक, राजनीतिक एवं सैन्य दृष्टि से पंगु बनाने की भरपूर प्रयास किए एवं न्यायसंगत ठहराने के लिए उसे ही "युद्ध दोषी" करार दिया। उसके न केवल उपनिवेशों तथा यूरोप में उसके विजीत प्रदेशों को उससे छिन लिया गया वरन् उसके अपने प्रदेश भी उससे बलात् ले लिये गये। उसका पूर्ण निःशस्त्रीकरण कर दिया गया एवं उसपर भारी जुर्माने की रकम लाद दी गयी। स्थायी रूप से आर्थिक दृष्टिकोण से पंगु बना देने के उद्देश्य से सार जैसे प्रमुख औद्योगिक क्षेत्र उससे छिन लिये गये। जर्मनी पर कई तरह के आर्थिक प्रतिबंध लगा दिये गये। वास्तव में "वार्साय की निरंकुशता" से उत्पन्न क्षोभ एवं असंतोष ने ही अंततः द्वितीय विश्वयुद्ध को जन्म दिया। यह निश्चित था कि स्वाभिमानी जर्मनी भविष्य की प्राथमिकता सूची में इसप्रकार की भेदभावपूर्ण एवं थोपी गई संधि को तोड़ देने को सर्वोच्च प्राथमिकता देता।

शांति सम्मेलन के पश्चात् जर्मनी एवं इटली यूरोप के दो असंतुष्ट राष्ट्र थे। जर्मनी इसीलिए कि इसके प्रति वार्साय संधि के माध्यम से अन्याय किया गया था तथा इटली

इसलिए असंतुष्ट था कि शांति संधियों से उसकी महत्वकांक्षा को ठेस पहुँची थी उसे अपेक्षित लाभ नहीं प्राप्त हुआ था। इस असंतोष, निराशा एवं क्षोभ के वातावरण में जर्मनी में हिटलर, एवं इटली में मुसोलिनी जैसे अधिनायकों के उदय का मार्ग प्रशस्त हुआ। जिसने जनता के असंतोष एवं निराशा को भुनाकर 'सर्वसत्तावादी सरकार" की स्थापना की।

जर्मनी एवं इटली की इन सर्वसत्तावादी सरकारों ने संधियों पर पुनर्विचार कराये जाने को अपना प्रमुख उद्देश्य बना लिया। वे शस्त्रीकरण तथा क्षेत्रविस्तार करने के लिए प्रतिबद्ध थे ऐसे में परिस्थापित व्यवस्था के रक्षकों से इन फासिस्ट ताकतों का संघर्ष होना अनिवार्य था। जब हिटलर एवं मुसोलिनी ने अपने-अपने कार्यक्रमों को अंजाम देना शुरू किये तो यूरोप में युद्ध का वातावरण निर्मित होने लगा। 1933 में हिटलर ने राष्ट्रसंघ से नाता तोड़ लिया तथा 1934 में उसने आस्ट्रिया विलय की प्रथम कोशिश की। मार्च 1935 में जर्मनी ने वायुसेना निर्माण की घोषणा की तथा सैन्य सेवा को अनिवार्य बना दिया।

1930 तक आते-आते यह पूर्णतः स्पष्ट हो गया कि अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति का खेल राष्ट्रीय स्वार्थपूर्ति के लिए ही खेला जा रहा था। अन्तर्राष्ट्रीय शांति एवं सुरक्षा के पहरेदार देश अपने साम्राज्यवादी लाभों को त्यागने के लिए तैयार नथे न ही पूर्ण निःशस्त्रीकरण में इनकी कोई दिलचस्पी थी। इसलिए प्रथम विश्वयुद्ध के उत्तरदायी तत्वों को अभी तक समाप्त नहीं किया जा सका था। इन परिस्थितियों में अन्तर्राष्ट्रीय शांति एवं सुरक्षा का उद्देश्य खतरे में था तथा इसके प्रहरी "राष्ट्रसंघ" की असफलता सुनिश्चित थी।

वास्तव में राष्ट्रसंघ अपनी कई दुर्बलताओं के कारण असफल हो गया मसलन अमेरिका जैसे शक्तिशाली राष्ट्र का सदस्य न होना, प्रारम्भ में पराजित राष्ट्रों को सदस्यता न प्रदान करना, रूस द्वारा राष्ट्रसंघ को पश्चिमी राष्ट्रों का साम्यवादी रूस के विरुद्ध षडयंत्र मानना, राष्ट्रसंघ की अपनी सेना का न होना तथा आर्थिक रूप से परतंत्र होना प्रमुख है। इंग्लैंड राष्ट्रसंघ के माध्यम से जहाँ रूस की साम्यवादी प्रवृत्तियों पर अन्तर्राष्ट्रीय नियंत्रण रखना चाहता

था वही फ्रांस इटे शांति सम्मेलनों की शर्तों को पालन कराने वाला तंत्र मात्र समझता था। ऐसे में राष्ट्रसंघ एक कमजोर एवं अप्रभावी संस्था मात्र बनकर रह गया। इसकी अप्रभावता हमें 1931 के मंचूरिया संकट, 1935-36 के अबीसीनिया संकट के दौरान देखने को मिलती है जब जापान तथा इटली ने अपने भयानक मंसूबों को अंजाम दिये। 1933 में जर्मनी एवं जापान तथा 1937 में इटली ने अपने साम्राज्यवादी प्रसार नीतियों को अंजाम देने के लिए राष्ट्रसंघ से इस्तीफा देकर उसे किंकर्तव्यविमूढ़ बना दिया। इससे राष्ट्रसंघ की प्रतिष्ठा में कमी आई। इसके पश्चात जर्मनी, इटली एवं जापान की आक्रामक एवं विस्तारवादी नीतियों के कारण समूचे विश्व की शांति एवं सुरक्षा खतरे में पड़ गयी।

वास्तव में राष्ट्रसंघ की सारी शक्ति ब्रिटेन एवं फ्रांस पर निर्भर थी लेकिन अपने राष्ट्रीय स्वार्थों के कारण उन्होंने आक्रमणकारियों के प्रति "तुष्टीकरण की नीति" अपनाई। ब्रिटेन का वास्तविक डर 'साम्यवादी रूस' से था। 'विश्व क्रांति' की बोल्शेविकों की बातें एवं उपनिवेशवाद को जड़ से समाप्त करने जैसे उनके इरादे, विश्व के सबसे शक्तिशाली साम्राज्यवादी ताकतवर देश ब्रिटेन के लिए चिंता के विषय थे। इस साम्यवादी धमकी के कारण ब्रिटेन ने फासीवाद से नाता जोड़ना उचित समझा। उसके लिए जर्मनी तथा इटली साम्यवादी रूस के अच्छे प्रतिरोधक हो सकते थे। फ्रांस अमेरिका के तटस्थ रहने की स्थिति में ब्रिटेन की सहायता के बिना आक्रामक देशों को विरोध मोल नहीं ले सकता था। ऐसे में फ्रांस के पास अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में ब्रिटेन के पिछलग्गू बने रहने के अतिरिक्त अन्य कोई चारा नथा। इधर फासिस्ट ताकतों ने साम्यवाद विरोधी प्रचार से प्रजातांत्रिक देशों को खूब उल्लू बनाया एवं अपनी तुच्छ महत्वकांक्षाओं की पूर्ति में लगे रहे। ब्रिटेन की तुष्टीकरण नीति का सर्वप्रथम प्रकटीकरण मार्च 1936 में राइनलैंड के पुनर्सैन्यीकरण के दौरान, 1938 में आस्ट्रिया विलय के दौरान देखने को मिला। 1938 में म्यूनिख समझौता के समय यह अपनी पराकाष्ठा पर पहुंच गयी किंतु शीघ्र ही फासिस्ट ताकतों के कृत्य ने ब्रिटेन, फ्रांस सहित समस्त विश्व की आंखें खोल दी। म्यूनिख में अपने गम्भीर वादों के बावजूद हिटलर द्वारा मार्च 1939 में चेकोस्लोवाकिया को रौंद डालना एवं स्वतंत्र

डैन्जिग शहर तथा पॉलिश कॉरिडोर पर दावा करने जैसी घटना ने स्पष्ट कर दिया कि तुष्टिकरण की नीति के माध्यम से हिटलर एवं फासिस्ट ताकतों को रोक पाना अब असम्भव है। वस्तुतः तुष्टिकरण की नीति ने फासिस्ट ताकतों को शांति, सुरक्षा एवं निःशस्त्रीकरण के सारे प्रयासों को विफल करने को प्रोत्साहित किया जिसने राष्ट्रसंघ जैसी संस्था को मूकदर्शक बना दिया। इससे सामुहिक सुरक्षा का सिद्धांत खतरे में पड़ गया।

युरोप के लिए शांति दूर की चीज हो गयी। दोनों दल उन्मादी "शस्त्रीकरण" की होड़ में लग गये। वास्तव में यह दौर कभी खत्म नहीं हुआ था। वार्साय के प्रतिबंधों के बावजूद जर्मनी गुप्त तरीकों के जरिये, रूस की सहायता से शस्त्रीकरण जारी रखा था तथा हिटलर के आने के बाद यह उसका खुल्लमखुल्ला लक्ष्य हो गया। ब्रिटेन एवं फ्रांस ने भी कभी शस्त्रीकरण की योजना से अपना मुँह नहीं मोड़ा था। राइनलैंड तथा अबीसीनिया अधिग्रहण के पश्चात् 1937 से इसमें तेजी आ गयी।

सुदूरपूर्व में जापान अपनी आक्रमक योजना को अंजाम देने के लिए प्रतिबद्ध था। उसने अपने इरादे 1931 में मंचुरिया पर आक्रमण कर स्पष्ट कर दिए। जुलाई 1937 में उसने चीन पर पुनः आक्रमण की धृष्टता दिखायी। इसके पूर्व Nov. 1936 में जापान ने जर्मनी के साथ एक 'साम्यवाद विरोधी' समझौते पर हस्ताक्षर किये। अबीसीनिया संकट के दौरान इटली का जर्मनी द्वारा दिये गये समर्थन ने पहले ही तय कर दिया कि इटली जर्मनी का साथी होगा। 1936 में उनके बीच 'रोम-बर्लिन समझौता' हो चुका था, मार्च 1938 में इटली ने 'एन्टी कौमिन्टर्न समझौते' पर दस्तखत कर दिये जिससे 'रोम-बर्लिन-टोकियो' धूरी का निर्माण हुआ।

द्वितीय विश्वयुद्ध हेतु उपरोक्त सभी कारणों से बारूद का महल खड़ा हो चुका था, केवल उसमें चिंगारी लगने की देर थी। यह कार्य डैन्जिग तथा पॉलिश गलियारा को लेकर हिटलर द्वारा 1 Sept 1939 को 'पोलैंड' पर आक्रमण द्वारा कर दिया गया। इसबार तुष्टीकरण असम्भव था, शायद अब पानी सिर के ऊपर चला गया। 3 Sept. को ब्रिटेन ने जर्मनी के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी तथा इसके कुछ ही घंटों बाद फ्रांस ने भी यही किया। यह द्वितीय महायुद्ध की शुरुआत थी।

महायुद्ध के उत्तरदायित्व के प्रश्न को लेकर इतिहासकारों के बीच परस्पर विरोधी विचार देखने को मिलते हैं। अधिकांश

विद्वानों ने वार्साय की अपमानजनक संधि, राष्ट्र संघ की विफलता, तुष्टीकरण की नीति जैसे कारणों को द्वितीय विश्वयुद्ध का उत्तरदायी कारण माना है। वास्तविकता तो यह है कि 1938 तक वार्साय की संधि के अनेक आपत्तिजनक प्रावधानों को समाप्त किया जा चुका था तथा जर्मनी एक शक्तिशाली राष्ट्र के रूप में उभर चुका था। अनेक इतिहासकारों का मानना है कि हिटलर पोलैंड पर अधिकार कर प्रथम विश्वयुद्ध में जर्मनी की पराजय का बदला लेना चाहता था। साथ ही पोलैंड पर अधिकार कर वह साम्यवाद के प्रसार को रोकना चाहता था इसीलिए हिटलर की नीतियां ही मुख्य रूप से उत्तरदायी बनी। अनेक विद्वान इंग्लैंड एवं फ्रांस की तुष्टिकरण की नीति को द्वितीय विश्वयुद्ध के लिए उत्तरदायी मानते हैं। म्यूनिख समझौता के समय इंग्लैंड के प्रधानमंत्री चेम्बरलिन द्वारा चेकोस्लोवाकिया की सहायता नहीं किए जाने से भी हिटलर को सुडेटनलैंड पर अधिकार करने का अवसर मिल गया।

कुछ विद्वानों का यह भी विचार है कि सोवियत संघ और जर्मनी की संधि भी युद्ध के लिए उत्तरदायी थी। सोवियत संघ को जर्मनी के साथ संधि करने की जगह पोलैंड एवं पश्चिमी राष्ट्रों के साथ करनी चाहिए थी तथा एक 'ग्रैंड एलायंस' का निर्माण करना चाहिए था जो धुरी देशों को शांति व्यवस्था को भंग करने को प्रोत्साहित नहीं करता। अमेरिका अभी भी 'गोलार्द्ध की सुरक्षा' यानी केवल उत्तरी एवं दक्षिणी अमेरिका की सुरक्षा की नीति अपनाये हुये था।

इसप्रकार द्वितीय विश्वयुद्ध के लिए हिटलर के अतिरिक्त इंग्लैंड, फ्रांस, सोवियत संघ भी प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से उत्तरदायी थे फिर भी अधिकांश इतिहासकार हिटलर

6. एवं उसके नाजीवाद को ही द्वितीय विश्वयुद्ध के लिए उत्तरदायी मानते है।

Scanned with CamScanner